International Journal of Multidisciplinary Horizon

ISSN: **3049-2017**
IJMH 2026; 3(4): 36-40
© 2026 IJMH
www.themultijournal.com

Received: 24-06-2026
Accepted: 15-07-2026
Publish : 16-07-2026

डॉ० मीनाक्षी कोठारी
विभागाध्यक्ष, योग विज्ञान विभाग, डी. डी. कॉलेज, देहरादून (उत्तराखण्ड), भारत

गिरीश पाठक
शोध-छात्र, योग विज्ञान विभाग, स्पर्श हिमालय विश्वविद्यालय (पूर्व में हिमालयीय विश्वविद्यालय),फतेहपुर टाण्डा, डोईवाला, देहरादून (उत्तराखण्ड), भारत

Correspondence:
गिरीश पाठक
शोध-छात्र, योग विज्ञान विभाग, स्पर्श हिमालय विश्वविद्यालय (पूर्व में हिमालयीय विश्वविद्यालय),फतेहपुर टाण्डा, डोईवाला, देहरादून (उत्तराखण्ड), भारत

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में मनोविकारजन्य दोषों या मानसिक दोषों में आयुर्वेदिक रसायन चिकित्सा की भूमिका: एक विवेचनात्मक अध्ययन।

डॉ० मीनाक्षी कोठारी, गिरीश पाठक

शोध सारांश -

आधुनिक परिवेश में व्यक्ति अपने और अपने परिवार की देखभाल में इतना व्यस्त रहता है कि वह अपने शरीर पर ध्यान ही नहीं दे पा रहा है जिसके फलस्वरूप उसे वृद्धावस्था में स्वास्थ्य सम्बन्धी कई समस्याओं से जूझना पड़ता है। ऐसा परिवर्तित जीवनशैली, पारम्परिक खान-पान की आदतों में परिवर्तन और परिवर्तित सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था के कारण होता है। और व्यक्ति को अनेकानेक स्वास्थ्य सम्बन्धी मनोविकारजन्य दोषों या मानसिक दोषों से जूझना पड़ रहा है। जिसके परिणाम स्वरूप अत्यधिक बहुप्रचारित, बहुप्रचलित चिकित्सा पद्धतियाँ भी इस समस्या के निराकरण में विफल होती जा रही हैं। और आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में भी मनोविकारजन्य दोषों या मानसिक दोषों को रोकना एक महत्वपूर्ण चुनौती के रूप में स्वीकार किया जा रहा है। इन विकारों के उपचार हेतु अत्यधिक संख्या में मनोविकारजन्य दोषों या मानसिक दोषों से ग्रस्त व्यक्तियों को कई प्रकार की चिकित्सा पद्धतियों का उपयोग करना पड़ रहा है। जिसके चलते प्राचीन आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति पर भी लोगों का ध्यान केन्द्रित हो रहा है। और आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति में रुचि भी उत्पन्न हो रही है।

इसलिए, वर्तमान परिवेश में आयुर्वेद शास्त्र की ओर लोगों का बढ़ता रूझान यही सिद्ध कर रहा है कि प्राचीन चिकित्सा पद्धतियाँ आज भी उपयोगी ही नहीं अपितु अनुपम हैं। आयुर्वेद अनुपम जीवन शैली, जीवन दर्शन, आचार रसायन, सद्वृत्त एवं रसायन सरीखी चिकित्सा विधाओं के कारण प्रस्तुत सन्दर्भ में आशा की किरण है।

आयुर्वेद के दो प्रयोजनों में प्रथम प्रयोजन स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करने से सम्बन्धित है। और इसी प्रयोजन की पूर्ति के लिए प्रधानतः 'रसायन चिकित्सा' का उपदेश दिया गया है।

प्रयोजनं च अस्य स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणमातुरस्य विकारप्रशमनं च।।[1]

जीवन के उत्तरार्द्ध में' वार्धक्यावस्था के सम्भावित सहज धातुक्षय एवं जराजन्य लक्षणों को रोकना एवं शरीर की स्वाभाविक कार्यक्षमता (मनोवृत्तिगत) को बनाए रखना रसायन चिकित्सा के प्रधान लक्ष्य हैं। प्रस्तुत सन्दर्भ में आधुनिक चिकित्सा विज्ञानी भी परोक्ष रूप में 'हर्बल' के नाम से आयुर्वेद की ओर ही दृष्टिबद्ध हैं। अतः वर्तमान परिपेक्ष्य में' 'रसायन' सम्पूर्ण रूप से मानवमात्र के लिए स्वस्थ रहने के निर्विकार स्वरूप की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी शास्त्र है। जिसकी विभिन्न विधाओं के नियमपूर्वक एवं मर्यादापूर्वक पालन/सेवन से मनुष्य बल, मेधा एवं शक्ति सम्पन्न होकर स्वस्थ जीवन यापन कर सकता है।

इसलिए शरीर को स्वस्थ एवं मनोविकारजन्य दोषों या मानसिक दोषों से मुक्त रखने के उद्देश्य से इस अध्ययन को आवश्यक समझा गया है एवं इस अध्ययन का उद्देश्य यह निर्धारित करना है कि मनोविकारजन्य दोषों या मानसिक दोषों में आयुर्वेदिक रसायन चिकित्सा की क्या भूमिका है।

कूट शब्द - मनोविकारजन्य दोष या मानसिक दोष, आयुर्वेदिक रसायन चिकित्सा।

परिचय -

मनोविकारजन्य दोष या मानसिक दोष[2] **-**

वायुः पित्तं कफश्चोक्तः शारीरो दोषसंग्रहः।
मानसः पुनरुद्दिष्टो रजश्च तम एव च।[3]

जैसे वात, पित्त और कफ तीन शारीरिक दोष हैं। उसी तरह रज और तम मानसिक दोष हैं जो मन को प्रभावित करते हैं। वास्तविक रूप में सत्व, रज और तम तीन ऐसे तत्व हैं जो मन को प्रभावित करते हैं। हालाँकि, इसमें भी सत्व गुण स्वभाव से शुद्ध है, इसलिए यह किसी भी मानसिक बीमारी का कारण नहीं बन सकता। अन्य दोनों गुण रज और तम मानसिक विकृति का कारण बनते हैं। इसलिए इन दोनों को मानसिक दोषों की सूची में शामिल किया गया है। विवेचनात्मक उद्देश्य के लिए, यदि सत्व को विकार मुक्त रूप में नहीं देखा जाता है, तो मन कभी भी विकृतियों से मुक्त स्थिति प्राप्त नहीं करेगा। यह हमेशा विकृत अवस्था में रहेगा और तीनों गुणों में से एक या दोनों से प्रभावित होगा। विकार मुक्त मन के बिना वास्तविक ज्ञान प्राप्त करना असम्भव है, इसलिए जिसके पास सच्चे ज्ञान का अभाव है, उसे बचाया नहीं जा सकता। इस प्रकार, सत्व गुण मन को विकृत नहीं करता है।

मोक्षो रजस्तमोऽभावाद्बलवर्त्मसंक्षयात्।
वियोगः कर्मसयोगैरपुनर्भाव उच्यते।।[4]

मोक्ष यह दर्शाता है कि आत्मा को अब शरीर की आवश्यकता नहीं है। इसे मोक्ष के रूप में जाना जाता है और यह तब संभव होता है जब रजोगुण और तमोगुण शरीर में अनुपस्थित होते हैं।

मोक्ष के पीछे विचार यह है कि व्यक्ति को न तो रजोगुण और तमोगुण को अपने विचारों पर प्रभाव डालने देना चाहिए और न ही इस जीवन में कोई ऐसा कर्म करना चाहिए जिससे उसे पिछले कर्मों का फल भोगना पड़े। जब तक यह परिस्थिति उत्पन्न नहीं होती, तब तक मन प्रबल रजोगुण या तमोगुण के अनुसार प्रभावित और विकृत होता रहेगा। इन मानसिक रोगों को मानस विकार कहा जाता है और रज और तम का कारण मानस दोष कहलाता है।

मानसिक दोषों से उत्पन्न व्याधियाँ - वासना, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, अहंकार, अभिमान, शोक, उदासी, भय, आनन्द इत्यादि व्याधियाँ हैं जो मानसिक दोषों से उत्पन्न होते हैं।

मानसिक रोगों में प्रारम्भिक चरण मन की विकृति है, जिसके प्रभाव के परिणामस्वरूप शरीर में असन्तुलन और विकृति आती है। यदि मानसिक विकृति पैदा करने वाले कारकों को समाप्त कर दिया जाए तो शरीर में विकार आमतौर पर अपने आप दूर हो जाते हैं। इसी तरह, यदि शारीरिक समस्याएँ वात, पित्त या कफ में असन्तुलन के कारण होती हैं, तो उनके प्रभावों के परिणामस्वरूप मानसिक रोगों की उत्पत्ति की सम्भावना भी बढ़ जाती है। और जैसे ही शारीरिक विकारों के कारण समाप्त हो जाते हैं, वैसे ही मानसिक असन्तुलन की स्थिति भी सन्तुलित हो जाती है।

जब वात, पित्त और कफ सन्तुलित अवस्था में होते हैं, तो शरीर की प्राकृतिक प्रक्रियाएं सम्पूर्ण होती हैं और जब ये असन्तुलित होते हैं, तो शरीर की जैविक, रासायनिक और शारीरिक प्रक्रियाओं में विकार उत्पन्न होता है। इसी तरह, रज और तम का सन्तुलन मानसिक कार्यों को दर्शाता है जो सन्तुलन में हैं, जबकि उनका असन्तुलन मानसिक रोगों को दर्शाता है। असन्तुलित दोष या धातुएँ रोग की उत्पत्ति का कारण हैं, जबकि सन्तुलित अवस्था आरोग्य की उत्पत्ति का कारण है। इसीलिए विकारों को दुःख कहा जाता है, और आरोग्य को सुख कहा जाता है।

असामान्य अवस्था के मुख्य कारक -

शरीर और मन की असन्तुलित अवस्था के लिए तीन मुख्य कारक हैं।

तत्र तु खल्वेषां द्वयानामपि दोषाणां त्रिविधं प्रकोपणं तद्यथा- आत्येन्द्रियार्थसंयोगः प्रज्ञापराधः परिणामश्चेति।।[5]

(1) असात्म्येन्द्रियार्थसंयोगः - इन्द्रियों का अपने प्राकृतिक विषयों के साथ असन्तुलित सम्बन्ध। "असात्म्य संयोग" शब्द इन्द्रियों और उनके प्राकृतिक विषयों के बीच अत्यधिक, अनुचित या गलत सम्बन्ध को सन्दर्भित करता है।

(2) प्रज्ञापराध (ज्ञान के विरुद्ध अपराध) - धी (निर्णायक बुद्धि), धृति (ग्रहणशील बुद्धि) और स्मृति (स्मरण रखने वाली बुद्धि) सभी प्रज्ञा के घटक हैं। प्रज्ञापराध इनके दुरुपयोग, अत्यधिक उपयोग अथवा अनुचित उपयोग के अभाव से होता है।

प्रभाव - काल (ऋतुओं से सम्बन्धित समय अथवा पर्यावरण से सम्बन्धित समय) का दुरुपयोग, अत्यधिक उपयोग अथवा अनुचित उपयोग से प्रभावित होना।

भले ही कुछ दोष हों, प्रत्येक कारण की विविधता, असात्म्येन्द्रिया-र्थसंयोग प्रज्ञापराध, और परिणामों की श्रेणी असंख्य रोगों और विकारों को जन्म देती है।

इन मानसिक दोषों के आधार पर आयुर्वेदिक रसायन चिकित्सा को स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा एवं रोगी के रोग को नष्ट करने हेतु प्रयोग में लाया जाता है। आयुर्वेद चिकित्सा शरीर को स्वस्थ रखने के सिद्धान्तों का पालन करने और मनुष्य को रोगमुक्त बनाये रखने के उद्देश्य से एवं रोग-निवारण हेतु रोगी के शरीर को ऋतुचर्या के अनुसार शुद्ध करने की पूर्ण विधि है। रोगी के रोग का सम्पूर्ण निवारण हेतु रसायन चिकित्सा को महत्वपूर्ण चिकित्सा कर्म माना गया है।

रसायन चिकित्सा के उद्देश्य[6] **-**

(1) स्वस्थ व्यक्तियों में रसायन चिकित्सा -

स्वस्थ व्यक्तियों में स्वास्थ्य संरक्षण व रोग प्रतिषेधनार्थ अर्थात् रोग प्रतिरोधक हेतु रसायन चिकित्सा का विधान वर्णित है।

(2) रसायन-वाजीकरण चिकित्सा कराने का विधान -

अष्टांग आयुर्वेद के दो विशेष अंग हैं - रसायन और वाजीकरण। उत्तम पौरुष शक्ति और अच्छी सन्तान पाने के लिए वाजीकरण चिकित्सा और वृद्धावस्था की रोकथाम के लिए रसायन चिकित्सा अत्यन्त उपयोगी हैं। आचार्य चरक ने इन दोनों चिकित्साओं को "स्वस्थस्योर्जास्कर" कहा है। इसके अन्तर्गत स्वस्थ व्यक्ति की ऊर्जा और शक्ति को बढ़ाने की प्रक्रिया निहित है।

रसायन चिकित्सा[7] **-**

रसायन सभी धातुओं को पोषण देने की सबसे उत्तम विधि है। और रसायन वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मानव शरीर औषधियों में रहने

वाले रस, गुण, वीर्य और विपाक को अवशोषित करने और औषधि-यों के अनुसार उनके प्रभावों को प्राप्त करने तथा बल, दीर्घायु और वीर्य शक्ति को बेहतर बनाने और श्रेष्ठ धातुओं का निर्माण करके आयु को बनाए रखने और वृद्धावस्था को नष्ट करने की क्षमता प्राप्त करता है।

सामान्य परिचय -

"रस" और "अयन" शब्दों को मिलाकर "रसायन" शब्द बना है। आयुर्वेद में, "रस" शब्द का अर्थ मुख्य रूप से स्वरस और मूल रस धातु से है। क्योंकि सबसे बड़ी रस धातु के बनने में दूसरी धातुओं की पुष्टि भी शामिल है। 'अयन' का अर्थ यात्रा मार्ग है। इसलिए, 'रसायन' शरीर की सभी धातुओं के लिए सबसे उत्तम मार्ग है।

'रसायन' शब्द की निरूक्ति -

'रसायन' शब्द 'रस + अयन' शब्दों के मेल से बना है।

इसे इस तरह से परिभाषित किया गया है -

रसस्य अयनं रासायनिकम्।

अर्थात् रस प्राप्त करने के साधन को 'रसायन' कहा जाता है।

रसायन की परिभाषा -

आयुर्वेदाचार्य महर्षि चरक के मतानुसार, जिन औषधियों को आहार-विहार के माध्यम से ग्रहण करने पर व्यक्ति की आयु में वृद्धि, ओजस, बल, रंगरूप, निरोगता, चमक आदि गुणों में वृद्धि होती है, तथा जिसकेप्रयोग से रस आदि धातुओं की प्राप्ति होती है, उसे 'रसायन' कहा जाता है।

रसायन सेवन के योग्य व्यक्ति -

आयुर्वेदाचार्यों द्वारा निम्न व्यक्तियों को रसायन सेवन के योग्य समझा गया है -

(1) जिनका अपनी इन्द्रियों पर नियन्त्रण हो। (2) जो सदैव सच बोलते हों। (3) जो कभी क्रोध न करते हों। (4) जो दुर्व्यसन न करते हों। (5) जो व्यक्ति मन, वचन और कर्म से हिंसा न करते हों। (6) शान्त मन वाले व्यक्ति। (7) समाज का हित सोचने वाले व्यक्ति। (8) जो व्यक्ति सुख-सुविधा से सम्पन्न हों। (9) जो व्यक्ति साधन एकत्रित करने में समर्थ हों। (10) सतर्क। (11) जो धार्मिक कार्यों का अभ्यास करने में नियमित रूप से तत्पर रहते हों। (12) मधुर वाणी बोलने वाले व्यक्ति। (13) निरन्तर दान करने वाले व्यक्ति। (14) यथाशक्ति तपस्या करने वाले व्यक्ति। (15) क्रूरता से दूर रहने वाले, उदारचित्त व्यक्ति। (16) जीवों पर दया रखने वाले व्यक्ति। (17) देव, गौ, ब्राह्मण, आचार्य, गुरु, वैद्य व वृद्धजनों में श्रद्धा रखने वाले व्यक्ति। (18) ईश्वर में आस्था रखने वाले व्यक्ति। (19) ठीक समय पर सोने और जागने वाले व्यक्ति। (20) सदैव घी एवं दूध का सेवन करने वाले व्यक्ति। (21) देश, काल एवं औषध मात्रा को समझने वाले व्यक्ति। (22) युक्तिपूर्ण ज्ञान से सम्पन्न व्यक्ति। (23) अहंकार का भाव न रखने वाले व्यक्ति। (24) चिकित्सक के निर्देशानुसार आहार-विहार का सेवन करने वाले व्यक्ति। (25) आध्यात्मिक - अध्यात्म विषयों का चिन्तन करने वाले व्यक्ति। (26) स्वस्थ - रोगमुक्त व्यक्ति। (27) जो व्यक्ति लम्बे समय तक नियमानुसार औषध ले सकें। (28) शुद्ध मन वाले - रज (राजसिक) व तम (तामसिक) से मुक्त। (29) वय की पूर्वावस्था एवं मध्यावस्था - 16 से 70 वर्ष तक की आयु वाले। (30) वमन आदि कर्मों से शुद्ध शरीर वाले व्यक्ति। (31) जिस व्यक्ति ने रसायन लाभ प्राप्त करने का संकल्प लिया हो।

रसायन सेवन के अयोग्य -

ये व्यक्ति रसायन सेवन के अयोग्य बताऐ गऐ हैं -

(1) अज्ञानी। (2) आलसी - उपयुक्त समय पर उपयुक्त औषध सेवन प्रारम्भ न करने वाले। (3) दरिद्रता और बिना साधन होने के कारण। (4) अस्थिर मन के होने कारण। (5) व्यसनों से कमजोर शरीर होने के कारण। (6) धर्म के विरूद्ध आचरण के कारण। (7) औषध से लाभ प्राप्त न होने के कारण।

औषधीय रसायन - जैसे, च्यवनप्राश, त्रिफला रसायन, ब्राह्मी रसायन, बला रसायन, अष्टवर्क, जीवनीयगण, शतावरी, अश्वगंधा, अमृता, विडंग, स्वर्ण, घृत एवं मधु आदि रसायन औषधियाँ एवं विभिन्न रसायन योग।

'कुटी (आवास) प्रावेशिक रसायन कल्प' विधि-विधान या चिकित्सा कक्ष प्रावेशिक रसायन कल्प' विधि-विधान[8] -

जिस रसायन सेवन विधि में रसायन के गुण पाने वाले इच्छुक व्यक्ति को एक खास तरह के आवासीय स्थान (कुटी) में रखकर विशेष खान-पान सम्बन्धी नियमों का पालन कराकर औषध योगों का सेवन उत्तम रसायन गुणों की प्राप्ति के लिए किया जाता हो। उसे ही 'कुटी प्रावेशिक रसायन कल्प' विधि-विधान कहते हैं।

उद्देश्य -

कुटी (चिकित्सा कक्ष) प्रावेशिक रसायन कल्प विधि के द्वारा मनुष्य में रसायन प्रभाव उत्पन्न करने के निम्न उद्देश्य हैं -

(1) उत्तम रसायन गुणों की प्राप्ति हेतु व्यस्त सामाजिक जीवन और विभिन्न जिम्मेदारियों से दूर रहना।

(2) एक निश्चित वातावरण एवं तापमान पर निवास कराना जिससे वातातपिक परिवर्तनों से रसायनसेवी मनुष्य अप्रभावित रहे।

(3) 'आचार रसायन' का पालन करने के लिए प्रोत्साहित करना।

(4) यह संकल्प दिलाना कि यह आवासीय व्यवस्था विशुद्ध रूप से आपके स्वास्थ्य की उन्नति एवं लम्बी आयु के लिए है।

(5) सत्व गुण की उन्नति एवं इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखने की प्रेरणा देना।

(6) मन के विपरीत शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध आदि से दूर रखना ताकि शारीरिक व मानसिक क्रियाओं में विपरीत प्रभाव उत्पन्न न हो सके।

(7) वर्षा, शीत, उष्णता, धुआँ, धूल आदि के प्रभाव को न्यूनतम करना।

चिकित्सा कक्ष प्रावेशिक रसायन विधि प्रदर्शित तालिका[9] -

इस विधि से रसायन सेवन के लिए प्रयुक्त प्रक्रियाओं को निम्न तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है -

I . प्रथम अवस्था - पूर्वकर्म

(1) कुटी या चिकित्सा कक्ष निर्माण।

(2) सामग्री एकत्रीकरण।

(3) रोगी परीक्षण - **(i)** योग्य-अयोग्य रोगी निर्धारण **(ii)** चिकित्सा कक्ष प्रावेशिक नियम **(iii)** रसायन प्रयोग से पूर्व शुद्धिकरण।

II . द्वितीय अवस्था - प्रधान कर्म

(1) रसायन औषध का सेवन।

(2) आहार-विहार सम्बन्धी दिशा निर्देश।

(3) रोगी परीक्षण।

(4) रसायन औषध प्रभाव परीक्षण।

III . तृतीय अवस्था - पश्चात् कर्म

(1) चिकित्सा कक्ष छोड़ना।

(2) आहार-विहार सम्बन्धी दिशा निर्देश।

(3) आचार रसायन पालन सम्बन्धी निर्देश।

वर्तमान समय में रसायन चिकित्सा -

वर्तमान समय में आहार और जीवन शैली में बदलाव के परिणामस्वरूप मनुष्य की रोग प्रतिरोधक क्षमता अत्यधिक मात्रा में कम होती जा रही है। कई लोगों में मनुष्य आयु तक पहुँचने से पहले ही बुढ़ापे के लक्षण प्रकट होने लगे हैं। इस समस्या के उपचार में रसायन चिकित्सा काफी लाभदायक सिद्ध हो सकती है।

आचार्यों ने रोग निवारण और स्वास्थ्य रक्षा व रोकथाम दोनों के लिए विशेष रसायन औषध योगों के उपयोग का निर्देश दिया है। 'नैमित्तिक (आकस्मिक) रसायन' का न केवल शरीर पर रसायन प्रभाव होता है, बल्कि यह किसी विशिष्ट रोगों का उपचार भी करता है।

इसके अतिरिक्त, वर्तमान समय में 'मेध्य रसायन' का प्रयोग और प्रचार-प्रसार बड़े पैमाने पर किया जा रहा है। जब मेध्य रसायन का प्रयोग विभिन्न प्रकार की मानसिक बीमारियों के इलाज में किया जाता है तो अप्रत्याशित लाभ सामने आते हैं। वर्तमान में, बहुत सारे चिकित्सा अनुसन्धान किए जा रहे हैं और आधुनिक वैज्ञानिक मानकों का उपयोग करके आयुर्वेदिक रसायन औषधियों की प्रभावकारिता और प्रभावशीलता का पुनर्मूल्यांकन करने का प्रयास किया जा रहा है।

आयुर्वेद के दो मुख्य उद्देश्य कहे गए हैं -

(1) स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना। **(2)** रोगी के रोग को शान्त करना।

इन दोनों उद्देश्यों में से प्रथम उद्देश्य को पूर्ण करने हेतु मुख्यतः 'रसायन चिकित्सा' का उल्लेख किया गया है।

आचार्य चरक के अनुसार, जिस औषध/आहार-विहार को ग्रहण करने से मनुष्य में दीर्घ आयु, ओज, बल, रूप-रंग में आरोग्यता, चमक एवं पुरुषार्थी या बलिष्ठ भावों की वृद्धि होती है तथा जिस उपाय से शरीर में श्रेष्ठ रसादि धातुओं की प्राप्ति होती है, उसे 'रसायन' कहते हैं।

इन्हीं प्रयोजनों की पूर्ति हेतु शारीरिक एवं मानसिक पोषण के लिए रसायन सेवन के निम्न प्रभाव निर्देशित किये गए हैं[10] -

(1) दीर्घ आयु की प्राप्ति **(2)** स्मरण शक्ति में वृद्धि **(3)** बुद्धि का विकास **(4)** आरोग्य की प्राप्ति **(5)** युवावस्था की प्राप्ति **(6)** वृद्धावस्था का नाश **(7)** शारीरिक चमक में वृद्धि **(8)** वर्णप्रसादन (शारीरिक रंग में शुद्धता) **(9)** स्वर प्रसादन (आवाज में शुद्धता) **(10)** बल में वृद्धि **(11)** उदार्यवर्धक (दान में उदारता की वृद्धि) **(12)** धातुओं में वृद्धि **(13)** इन्द्रियों में बल वृद्धि **(14)** वाणी में पूर्णता की प्राप्ति **(15)** कान्ति (शोभा) वर्धक **(16)** ओज में वृद्धि **(17)** वीर्य (पौरुष या शक्ति) में वृद्धि **(18)** मनोबल वृद्धि **(19)** रोगनाशक **(20)** पराक्रमवर्धक **(21)** सौन्दर्य वर्धक **(22)** सुख-वैभव वर्धक **(23)** ऊर्जा वर्धक **(24)** मोक्ष प्राप्ति **(25)** दुर्बलता नाशक **(26)** अधिक निद्रा का नाशक **(27)** तन्द्रा नाशन (थकावट नाशक) **(28)** श्रम (परिश्रम), थकावट, ग्लानि (मानसिक खेद) व आलस्य नाशक **(29)** अग्निवर्धक (जठराग्नि वर्धक) **(30)** धातुओं में प्रसन्नता।

मानसिक रोगों में रसायनों के प्रभावी होने का कारण -

रसायन औषधियाँ, विशेषकर "मेध्य रसायन", अपनी चिन्ता-विरोधी (Anti-Anxiety), तनाव-विरोधी (Antistress-Adaptogenic) गुणों के कारण मानसिक रोगों के उपचार में अत्यधिक प्रभावी पाई गई हैं। मस्तिष्क में कैटेकोलामिन (Catacholamine) के स्तर को कम करके, मेध्य रसायन औषधियाँ मस्तिष्क को शान्ति प्रदान करने वाले प्रभावी गुण उत्पन्न करती हैं। जिसके परिणामस्वरूप, इन्हें 'ट्रन्क्यूलाइज्जर' (Tranquilizer) और 'चिन्ता-विरोधी' (Anti-Anxiety), औषधियों के रूप में उपयोग किया जाता है, जो इन रोगों के लिए अच्छा कार्य करती हैं।

रसायन सेवन के लाभ प्राप्ति का महत्वपूर्ण नियम -

आचार्यों के अनुसार, जब तक रोगी की शारीरिक शुद्धि न हो जाए, तब तक रसायन का प्रयोग नहीं करना चाहिए। आचार्य चरक के अनुसार अशुद्ध शरीर पर रसायन औषधियों के प्रयोग से लाभ नहीं मिलता, जैसे गन्दे कपड़े पर रंग नहीं चढ़ता, उसी प्रकार रसायन प्रयोग तभी सफल होता है जब रोगी ने रसायन का उपयोग करने से पहले संशोधन (शुद्धि) चिकित्सा कर पूर्ण ली हो।

तान्युपस्थिदोषाणां स्नेहस्वंदोपपादनैः।

पंचकर्माणि कुर्वीत मात्राकालीविचारयन्।।[11]

इस प्रकार, रसायन से पूर्णरूप से लाभान्वित होने के लिए स्नेहन-स्वेदन सहित वमन, विरेचन, अनुवासन, निरुह और नस्य कर्म प्रक्रियाओं का उचित रूप से एवं विधिविधान से उपयोग में लाने के बाद रसायन औषधियों को ग्रहण करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त, रसायन के सेवन के आवश्यक परिणामों को प्राप्त करने के लिए सद्वृत (सदाचार) और स्वस्थवृत (स्वस्थ आचरण) के सिद्धान्तों और संयम नियम का पालन करना भी महत्वपूर्ण है। इसलिए, रसायन चिकित्सा से पहले मानसिक और शारीरिक रूप से शुद्ध होना महत्वपूर्ण है।

निष्कर्ष -

रसायन सभी धातुओं को पोषण देने की सबसे उत्तम विधि है। और रसायन वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मानव शरीर औषधियों में रहने वाले रस, गुण, वीर्य और विपाक को अवशोषित करने और औषधियों के अनुसार उनके प्रभावों को प्राप्त करने तथा बल, दीर्घायु और वीर्य शक्ति को बेहतर बनाने और श्रेष्ठ धातुओं का निर्माण करके आयु को बनाए रखने और वृद्धावस्था को नष्ट करने की क्षमता प्राप्त करता है।

आचार्य चरक के अनुसार, जिस औषध/आहार-विहार को ग्रहण करने से मनुष्य में दीर्घ आयु, ओज, बल, रूप-रंग में आरोग्यता, चमक एवं पुरुषार्थी या बलिष्ठ भावों की वृद्धि होती है तथा जिस उपाय से शरीर में श्रेष्ठ रसादि धातुओं की प्राप्ति होती है, उसे 'रसायन' कहते हैं। इस प्रकार इन रसायनों के प्रभावी गुणों को देखते हुए यह साफ-साफ स्पष्ट होता है कि रसायन चिकित्सा स्वास्थ्य सम्बन्धी मनोविकारजन्य दोषों या मानसिक दोषों को नष्ट करने की श्रेष्ठ विधि है। और मनोविकारजन्य दोषों या मानसिक दोषों का निराकरण करने में अहम् भूमिका निभा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

1. च. सू. 30/26
2. गौड़, शिवकुमार, आयुर्वेदीय शरीर क्रिया विज्ञान, 1973, अध्याय - 02 (भाग-1), पृष्ठ संख्या - 14-16
3. अत्रिदेव कविराज, चरकसंहिता, 1948, भाग-1 (सूत्र-निदान-विमानात्मक), संस्करण - द्वितीय, अध्याय-01 (सूत्रस्थानम्), श्लोक संख्या - 57, पृष्ठ संख्या - 14
4. अत्रिदेव कविराज, चरकसंहिता, 2000, भाग-2 (शारीर-इन्द्रिय-चिकित्सितस्थान), अध्याय-01 (शारीरस्थानम्), श्लोक संख्या - 142, पृष्ठ संख्या - 25
5. अत्रिदेव कविराज, चरकसंहिता, 1948, भाग-1 (सूत्र-निदान-विमानात्मक), संस्करण - द्वितीय, अध्याय-06 (विमानस्थानम्), श्लोक संख्या - 06, पृष्ठ संख्या - 534
6. शर्मा, प्रोफेसर अजय कुमार, कायचिकित्सा (चतुर्थ भाग), संस्करण - 2014, अध्याय - 1 (कायचिकित्सा: पंचकर्म), पृष्ठ संख्या - 4-9
7. शर्मा, प्रोफेसर अजय कुमार, कायचिकित्सा (चतुर्थ भाग), संस्करण - 2014, अध्याय - 10 (केरलीय पंचकर्म), पृष्ठ संख्या - 309-328, प्रकाशक -चौखम्भा पब्लिशर्स, वाराणसी, मुद्रक - तरुण ऑफसेट प्रेस, नई दिल्ली-2
8. शर्मा, प्रोफेसर अजय कुमार, कायचिकित्सा (चतुर्थ भाग), संस्करण - 2014, अध्याय - 10 (केरलीय पंचकर्म), पृष्ठ संख्या - 329-338, प्रकाशक -चौखम्भा पब्लिशर्स, वाराणसी, मुद्रक - तरुण ऑफसेट प्रेस, नई दिल्ली-2
9. शर्मा, प्रोफेसर अजय कुमार, कायचिकित्सा (चतुर्थ भाग), संस्करण - 2014, अध्याय - 10 (केरलीय पंचकर्म), पृष्ठ संख्या - 330, प्रकाशक - चौखम्भा पब्लिशर्स, वाराणसी, मुद्रक - तरुण ऑफसेट प्रेस, नई दिल्ली-2
10. शर्मा, प्रोफेसर अजय कुमार, कायचिकित्सा (चतुर्थ भाग), संस्करण - 2014, अध्याय - 9 (केरलीय पंचकर्म), पृष्ठ संख्या - 319-322
11. च. सु. - 2/15